श्री श्री आनन्दमूर्ति का भाषाविज्ञान

*डॉ. शालिनी सक्सेना

सारांश

मानव मात्र की भाव अभिव्यक्ति का माध्यम भाषा है भाषा का विकास कब हुआ भाषा कैसे निर्मित हुई इन सब बिंदुओं पर भाषा विज्ञान में विस्तार से चर्चा की गई है श्री श्री आनंदमूर्ति ने भाषा विज्ञान एवं व्याकरण पर अपने चिंतन को विस्तार से प्रस्तुत किया है विश्व भाषाओं में भारतीय भाषा परिवार की संस्कृत प्राचीनतम भाषा है आनन्दमूर्ति ने संस्कृत के साथ अन्य भारतीय भाषाओं की तुलना उनकी उत्पत्ति एवं विकास पर विस्तार से विवेचना की है इस आलेख में इसी विषय को प्रतिपादित किया गया है।

भारतीय ही नहीं अपितु विश्व की समग्र भाषाओं के अध्ययन के लिए संस्कृत भाषा एवं युरोपीय परिवार को भाषाओं का अध्ययन आवश्यक है, इसके साथ ही भाषा वैज्ञानिक के लिए बहुभाषाविज्ञ होना आवश्यक है। श्री प्रभात रंजन सरकार न केवल दर्शनशास्त्र के ज्ञाता रहे हैं अपितु उन्होंने भारतीय भाषाओं विशेषकर क्षेत्रीय भाषाओं का गहन अध्ययन करके भाषावैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। उन्होंने प्रतिपादित किया है कि विश्व सभी भाषाएं परस्पर सम्बन्द्ध हैं और एक स्वाभाविक गति से विकास को प्राप्त हैं। उन्हें व्याकरण के बन्धन में बांधकर रखना असम्भव है। जो भाषा व्याकरण के बन्धन में बंध जाती है वह जीवित भाषा नहीं रहती है, इसलिए गतिशील भाषा के लिए गतिशील व्याकरण की आवश्यकता होती है।

यदि भाषा व्याकरण में बंधकर रह जाए उसका विकास अवरूद्ध हो जाता है। साहित्यिक भाषा एवं लोकभाषा परस्पर सम्बद्ध होते हुए भी इस मायने में अलग कही जा सकती हैं कि साहित्यिक भाषा व्याकरण निबद्ध होती है जबकी लोकभाषा व्याकरण के बन्धों से अनजान सहज विकास एवं परिवर्तन को अपनाते हुए आगे बढ़ती है।

प्रभातरंजन सरकार ने अपने भाषाविषयक चिन्तन को अपने प्रवचनों में प्रकट किया है। उनके प्रवचनों को संकलित करते हुए वर्णविचित्रा नामक अन्य तीन खण्डों में प्रस्तुत किया गया है। ग्रन्थकार ने सहज रूप से यह स्पष्ट किया है कि मनोभावों का प्रकटीकरण का माध्यम ध्वनि है। सही ढंग से उच्चरित ध्वनि ही वास्तविक मनोभावों को प्रकट कर सकती है। एक एक ध्वनि एक एक वर्ण निर्मित होता है और ये मातृका वर्ण कहलाते हैं। उच्चारण सही नहीं होने पर ध्वनि की मूल भावना नष्ट हो जाती है। यह तथ्य साहित्य, संगीत, बोलचाल आदि सभी क्षेत्रों पर लागू होता है। वर्णमाला का प्रत्येक अक्षर एक एक वृत्ति का अभिप्रकाशक और नियन्त्रक है। वर्णविचित्रा न केवल वर्णों की उत्पत्ति एवं ध्वनि विशेष के मूल भाव को प्रकट करती है अपितु भारतीय क्षेत्रीय भाषाओं के इतिहास पर भी प्रकाश डालती है। संस्कृत से प्रारम्भ भारतीय भाषाओं का इतिहास क्षेत्रीय भाषाओं के विकास क्रम को जाने बिना पूरा नहीं हो सकता। इस पुस्तक में बंगला, उड़िया आदि क्षेत्रीय भाषाओं के मूल स्त्रोत पूर्वी अर्द्धमागधी, पश्चिमी अर्द्ध मगंधी आदि भाषाओं के स्वरूप एवं उनमें हुए परिवर्तनों का आधार स्पष्ट करने का प्रयास किया है। तीन खण्डों में विभक्त

इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में अन्तःस्थ ल और वर्ण, नया और व वर्ण, तथा न ण उष्म वर्णों के स्वरूप का प्रतिपादन किया है। इस पुस्तक में इन ध्वनियों की उत्पत्ति, प्रयोग एवं उद्देश्य की प्रतिपादित किया गया है। यथा श वर्ण का विवेचन करते समय उन्होंने स्पष्ट किया है कि वर्गीय वर्णों में केवल च वर्ग और तालव्य वर्ण के साथ तालव्य श की संयुक्ति होती है। जैसे निश्चित, निश्छिद्र आदि। पंचम वर्ण के साथ अधिकांश अन्तःस्थ वर्णों के साथ संयोग होता है जैसे शड्, श्त्र आदि लेकिन उच्चारण कठिन होने के कारण श्ञ को श्र का व्यवहार होता है।

तथा उष्म वर्णों के स्वरूप का प्रतिपादन किया है। इस पुस्तक में इन ध्वनियों की उत्पत्ति, प्रयोग एवं उद्देश्य को प्रतिपादित किया गया है। यथा श वर्ण का विवेचन करते समय उन्होंने स्पष्ट किया है कि वर्गीय वर्णों में केवल च वर्ग और तालव्य वर्ण के साथ तालव्य शकी संयुक्ति होती है जैसे निश्चित, निश्छिद्र आदि। कवर्ग, टवर्ग, तवर्ग और पवर्ग के साथ तालव्य का संयोग नहीं होता। पंचम वर्ण के साथ अधिकांश अन्तःस्थ वर्णों के साथ संयोग होता है जैसे श,द, श, ञ आदि लेकिन उच्चारण कठिन होने के कारण श, ञ को श्र का व्यवहार होता है।

दार्शनिक होने के कारण आपने विभिन्न ध्वनियों के दार्शनिक प्रयोग एवं महत्त्व का भी निरूपण किया है। यथा श्री शब्द के विवेचन के प्रसंग में वे लिखते हैं कि श्री शब्द श, र एवं तीन वर्णों से निर्मित है। शरजोगुण का द्योतक है, र प्राणशक्ति या एनर्जी का द्योतक है दोनों मिलकर श्र होता है इसमें स्त्रियामीप् करके श्री बनता है जिसका अर्थ है रजोगुण और प्राण शक्ति का समन्वय। प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन में रजोगुण और प्राणशक्ति के समन्वय से जीवनोन् हो जाना चाहता है। इसीलिए भारत में प्राचीनकाल से नाम से पूर्व श्री लिखने की परम्परा है। ज फल मनुष्य के स्वास्थ्य में श्री लौटा लाता है वह है श्रीफल। जो जीवन में श्री सम्पद् चाहते हैं। उन सभी को श्रीफल से तृप्ति मिलती है। इसी प्रकार ष के सन्दर्भ में उनका कथन है कि मातृका वर्ण है यह जागतिक अभीप्सा का बीजमन्त्र है साथ ही तमोगुण का बीज मन्त्र है। जड़त तमोगुण का फल है। प्राण शक्ति है और ष तमोगुण युक्त है अतः ष के साथ र का संयोग नहीं होता। ष को र के अधीन रहना पड़ता है अतः ष सदैव र के नीचे रहता है र्ष होता है प्र नहीं ष के साथ मूर्धन्य वर्ण का संयोग हो सकता है तालव्य का नहीं। जैसे निष्चेष्ट नहीं होगा नि होगा। दन्त्य वर्ण के साथ भी ष का संयोग नहीं होता केवल कवर्ग एवं पवर्ग के साथ विष –अवस्था में संयोग होता है। जब वहाँ उपसर्ग के साथ सन्धि होने के कारण र न आया हो अथ विसर्ग रह गया हो यथा निःकर का निष्कर किन्तु निः गम यहाँ र ध्वनि के कारण प – आया । इस विवेचन में जहाँ श्री सकार का दार्शनिक चिन्तन मुखर होता है वहीं व्याकरण सहज पकड़ एवं उसे हृदयंगम कराने का उनका अनूठा तरीका भी दिखाई देता है।

अन्य भाषा शास्त्रियों के समान उनका भी मानना है कि भाषा बनने के बहुत ब व्याकरण बना है। भाषा के सम्बन्ध में जो कुछ विशेष तौर पर करणीय है वह जिस शास्त्र बताया गया है. वही व्याकरण है। व्याकरण एक शास्त्र है और जो शासन के द्वारा त्राण का निर्मित करता है वह शास्त्र कहलाता है। भाषा के सन्दर्भ में व्याकरण शास्त्र विभिन्न विधि निषेध के बीच से होकर प्रचलन का समझाने में सहायता करता है। जो करणीय है वह विधि है और जो करणीय नहीं है वह निषेध व्याकरण के नहीं होने पर भी भाषा का विधि निषेध लुप्त नहीं होता अर्थात् भाषा अपने पथ पर नाना विधि निषेधों के बीच होकर प्रवाहमान रहती है। व्याकरण उन विधि निषेधों का विशेषण कर लोगों के समक्ष प्रस्तुत करता है। साथ ही भाषा की त्रुटियों को सुधारने में विशेष सहायता करता है अतः व्याकरण को त्रुटि मुक्त होना चाहिए। आज जैसा व्याकरण जब नहीं बना था उस वैदिक काल में भी उच्चारण के विधि निषेध थे। जिन वर्णों का उच्चारण सहज एवं स्वाभाविक था उन्हीं का उच्चारण स्वाभावतः किया जाता था। कुछ वर्णों का उच्चारण विशेष नियम के साथ होता था। ऋ, मूर्धन्य ष आदि का उच्चारण निष्ठा पूर्वक करना पड़ता था। प्रारम्भिक अवस्था में लिखित व्याकरण के अभाव में उच्चारण पर विशेष ध्यान दिया जाता था। वैदिक शिक्षा ग्रन्थों में उच्चारण किस तरह किया जाये इस पर प्रकाश डाला गया है।

वर्ण एवं छन्दों के उच्चारण का तरीका उद्‌गाता सिखाता था।

श्री सरकार भाषाविज्ञान के इस सिद्धान्त का समर्थन करते है कि भौगोलिक वातावरण का प्रभाव भाषा पर पड़ता है और क्षेत्र विशेष के लोगों का उच्चारण अलग होता है। प्राचीनकाल में श, ष, स का उच्चारण जिस रूप में होता था आज हूबहू उस रूप में नहीं होता। वैदिक कालीन मनुष्य की शारीरिक संरचना आज के मनुष्य की देह संरचना से अलग है। उनका स्पष्ट मानना है कि भारत के मनुष्यों की क्षेत्रीय विभिन्नता के कारण ही उच्चारण भेद होता है कश्मीर के लोग जिस प्रकार उच्चारण करते हैं उस प्रकार बंगला लोग नहीं कर सकते। इसी कारण प्राचीन व्याकरण में प एवं ण के लिए जो विधि दी जाती थी आज वह अप्रासंगिक हो गई। इसी प्रकार अन्य स्थानों पर भी हुए बदलावों को नई दृष्टि से देखकर व्याकरण में परिवर्तन परिवर्धन किया जाना चाहिए। प्रथम खण्ड में उन्होंने ऋषि, दिक्षु, अक्ष, रस, उपनिषद् रास आदि शब्दों के आध्यात्मिक एवं प्रयुक्त अर्थों का प्रकाशन भी किया है।

कहा है और अवर्ण के दार्शनिक स्वरूप का प्रतिपादन किया है। यह अ ध्वनि सुरसप्तक को नियन्त्रित करती है और षडज ध्वनि को। शिव ने सुरसप्तक के आधार पर ध्वनियों को सजाया जो एक ओर विज्ञान का शब्द विज्ञान है तो दूसरी ओर संगीत का छन्दमय भाषागत ध्वनिविज्ञान इसलिए संगीत चर्चा में हम शिव को नहीं भूल सकते। ध्वनियों के विविध रंग ही राग रूप में प्रकट होते हैं। विशिष्ट रूप से ध्वनि संयोजन ही राग है।

द्वितीय खण्ड में ही उन्होंने निपातने सिद्ध एवं आर्ष प्रयोगों पर चर्चा की है जो शब्द संरचना व्याकरण की दृष्टि से गलत हो लेकिन दीर्घ काल तक साहित्य में प्रचलित रहे उसे स्वीकार कर लिया जाता है यह स्वीकृति शब्द संरचना के लालित्य अथवा बात रखने के लिए हो सकती है। ऐसे प्रयोगों को निपात ने सिद्ध कहकर स्वीकार कर लिया जाता है। इसी प्रकार व्याकरण दृष्टि से गलत शब्द संरचना जब किसी सिद्ध पुरुष द्वारा प्रयुक्त हो तो उसके सम्मान में स्थान विशेष पर उस प्रयोग को शुद्ध मान लिया जाता है। इसी प्रकार पृषी दीर्घ होता है । कविता में छन्द या मात्रा की खातिर अथवा गीत की राग रागणियों के लालित्य के लिए कहीं कहीं इस्व स्वर को दीर्घ कर दिया जाता है। यह निपातन या आर्ष प्रयोग नहीं कहला सकता अतः इसे पृषीदीर्घ कहा जाता हैं । वैष्णव साहित्य में इसके अनेक उदाहरण देखे जा सकते हैं।

तृतीय खण्ड में उ, ऊ, ऋ, ध्वनि का विवेचन किया गया है। श्री सरकार के भाष वैज्ञानिक विवेचन के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि भारतीय भाषाओं के इतिहास के साथ ही उन्होंने भारोपीय परिवार की भाषाओं का गहन अध्ययन किया था।

आपने भाषा की संरचना, ध्वनि संयोग एवं उनके विभिन्न भाषाओं में हुए पृथक् पृथक् प्रयोगों का तुलनात्मक अध्ययन किया है। आप ध्वनि के संगीतात्मक स्वरूप का निरूपण करते हुए उसके दार्शनिक महत्त्व एवं स्वरूप का प्रतिपादन भी करते चलते है। आपकी सहज प्रतिपादन शैली के चलते सामान्य जन भी भाषा के स्वरूप एवं उसके प्रयोगों को सम्यक् रूप से समझ सकते हैं। आपने प्रवचन के माध्यम से भाषाशास्त्र का सहज प्रतिपादन किया है।

***प्रोफेसर**
राजकीय महाराज आचार्य संस्कृत महाविद्यालय
जयपुर (राज.)

सन्दर्भ सूची

1. वर्ण विचित्रा, पृष्ठ १६०

2. वर्ण विचित्रा, भाग २, पृष्ठ ६
3. वर्ण विचित्रा, भाग २, पृष्ठ ३३ वर्ण विचित्रा, भाग २, पृष्ठ १९५
4. वर्ण विचित्रा, पृष्ठ १६२
5. वर्ण विचित्रा, भाग २, पृष्ठ ७
6. वर्ण विचित्रा, भाग २, पृष्ठ १९२